[2013] 1 एस.सी.आर 977

टी.पी. विष्णु कुमार

बनाम

केनरा बैंक पी.एन. रोड, तिरुप्पुर एवं अन्य

(2013 की विशेष अनुमति याचिका (दीवानी) सं. 1258-1260)

फरवरी 11, 2013

[के.एस. राधाकृष्णन और दीपक मिश्रा, न्यायाधीशगण]

भारत का संविधान, 1950 - अनुच्छेद 226 - उसके अंतर्गत रिट क्षेत्राधिकार - ऋण वसूली अधिनियम के अंतर्गत बैंक की बकाया राशि की वसूली के मामले में - बैंक द्वारा ऋण वसूली अधिकरण के समक्ष दाखिल मूल आवेदन - प्रतिवादियों द्वारा अधिकरण के समक्ष बैंक को कुछ दस्तावेज प्रस्तुत करने का निर्देश देने के लिए आवेदन दाखिल करना - आवेदन खारिज - रिट याचिका - उच्च न्यायालय के एकल न्यायाधीश(ए.न्या.) ने यह अभिनिर्धारित किया कि अतिरिक्त लिखित कथन दाखिल करने के प्रयोजन के लिए दस्तावेज आवश्यक थे - उच्च न्यायालय की खंड पीठ (खं.पी.) ने रिट अपील स्वीकार करते हुए अभिनिर्धारित किया कि प्रतिवादी के पास अधिनियम की धारा 20 के अंतर्गत वैकल्पिक उपचार उपलब्ध था - अपील पर, अभिनिर्धारित: जब धारा 20 के अंतर्गत विशिष्ट उपचार उपलब्ध हो, अनुच्छेद 226 के अंतर्गत क्षेत्राधिकार के प्रयोग में हस्तक्षेप न्यायोचित नहीं है - अनुच्छेद 226 के अंतर्गत शक्तियों का अधिनियम के अंतर्गत बकाया की वसूली के मामले में तब तक आह्वान नहीं किया जा सकता जब तक कि कोई सांविधिक उल्लंघन न हो जिससे पक्षकार को पूर्वाग्रह हो या जहां ऐसी कार्यवाही मनमानी, अनुचित और अन्यायपूर्ण हो - एकल न्यायाधीश (ए.न्या.) ने गुण-दोष

पर मामले का निर्णय किया जो अनुच्छेद 226 के अंतर्गत क्षेत्राधिकार के प्रयोग में अनुज्ञेय नहीं है - रिट न्यायालय के हस्तक्षेप ने कार्यवाही को चार वर्षों तक विलंबित कर अधिनियम के उद्देश्य और प्रयोजन को ही विफल कर दिया - बैंकों और वित्तीय संस्थाओं के देय ऋणों की वसूली अधिनियम, 1993 - धारा 20 - न्याय प्रशासन।

उत्तरदाता-बैंक ने याचिकाकर्ता और उत्तरदाता सं. 2 से 6 के विरुद्ध ऋण वसूली अधिकरण के समक्ष 17% ब्याज सहित कुल रु. 1,59,51,477.93 की वसूली के लिए मूल आवेदन दाखिल किया। अपीलकर्ता और उत्तरदाता सं. 2 से 6 ने अधिकरण के समक्ष खातों का उद्धरण तथा बैंकिंग लेनदेन से संबंधित दस्तावेज प्रस्तुत करने का निर्देश मांगते हुए अंतवर्ती आवेदन दाखिल किए। आवेदनों को इस आधार पर अस्वीकार कर दिया गया कि याचिकाकर्ता का आशय केवल कार्यवाही में विलंब करना था। याचिकाकर्ता ने अधिकरण के आदेश को रिट याचिका में चुनौती दी। उच्च न्यायालय के एकल न्यायाधीश (ए.न्या.) ने याचिका स्वीकार करते हुए अभिनिर्धारित किया कि अतिरिक्त लिखित कथन दाखिल करने के प्रयोजन के लिए दस्तावेज आवश्यक थे। उच्च न्यायालय की खंड पीठ (खं.पी.) ने रिट अपील स्वीकार करते हुए अभिनिर्धारित किया कि बैंकों और वित्तीय संस्थाओं के देय ऋणों की वसूली अधिनियम, 1993 की धारा 20 के अंतर्गत वैकल्पिक उपचार उपलब्ध था। अतः वर्तमान याचिका दाखिल की गई।

अतः याचिका खारिज करते हुए, न्यायालय ने

अभिनिर्धारित किया: 1. देश में ऋण वसूली अधिकरण बैंकों और वित्तीय संस्थाओं के देय ऋणों के शीघ्र निर्णय और वसूली के लिए स्थापित हैं। बैंकों और वित्तीय संस्थाओं के देय ऋणों की वसूली अधिनियम, 1993 व्यथित पक्षकार को, यदि वह अधिकरण द्वारा पारित किसी आदेश से असंतुष्ट है, तो उपाय का तंत्र प्रदान करता है। अधिनियम की धारा 20 कहती है कि अधिनियम के अंतर्गत किसी अधिकरण द्वारा किए गए या किए गए माने जाने वाले किसी आदेश से व्यथित

कोई भी व्यक्ति मामले में क्षेत्राधिकार रखने वाले अपीलीय अधिकरण में अपील दायर कर सकता है। **जब अधिनियम की धारा 20 के अंतर्गत व्यथित पक्षकार को विशिष्ट उपचार उपलब्ध कराया गया हो, तो उच्च न्यायालय के एकल न्यायाधीश(ए.न्या.) को, भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के अंतर्गत अपने क्षेत्राधिकार के प्रयोग में, ऋण वसूली अधिकरण द्वारा पारित आदेशों में हस्तक्षेप करने में औचित्य नहीं था। [कंडिका 6 और 8] [981-ई-एच; 982-ए-बी, ई-एफ]**

2. अनुच्छेद 226 के अंतर्गत उच्च न्यायालय की शक्तियों का अधिनियम के अंतर्गत बकाया की वसूली के मामले में तब तक आह्वान नहीं किया जा सकता जब तक कि कोई सांविधिक उल्लंघन न हो जिससे पक्षकार को पूर्वाग्रह हो या जहां ऐसी कार्यवाही या कार्रवाई पूर्णतः मनमानी, अनुचित और अन्यायपूर्ण हो। जब अधिनियम स्वयं अधिनियम की धारा 20 के अंतर्गत अपील द्वारा एक तंत्र प्रदान करता है, तो उच्च न्यायालय को यह जांचने के लिए अनुच्छेद 226 के अंतर्गत क्षेत्राधिकार का आह्वान करने में औचित्य नहीं है कि अधिकरण द्वारा आवेदनों की अस्वीकृति सही थी या नहीं। याचिकाकर्ता और प्रतिस्पर्धी उत्तरदाताओं का कोई मामला नहीं है कि बैंक या अधिकरण ने उनके आवेदनों को अस्वीकार करके किसी सांविधिक प्रावधान का उल्लंघन किया। आवेदनों की अस्वीकृति के विरुद्ध रिट याचिका दायर की गई और उन्हें उच्च न्यायालय के एकल न्यायाधीश(ए.न्या.) द्वारा स्वीकार किया गया और गुण-दोष पर निर्णय किया गया, जो संविधान के अनुच्छेद 226 के अंतर्गत अपने क्षेत्राधिकार के प्रयोग में अनुज्ञेय नहीं है। यदि अधिकरण द्वारा पारित प्रत्येक अंतवर्ती आदेश की शुद्धता या अन्यथा का रिट न्यायालय में परीक्षण होने जा रहा है, तो यह केवल ऐसे अधिकरण की स्थापना के उद्देश्य और प्रयोजन को ही विफल करेगा। प्रस्तुत मामले में, रिट न्यायालय के हस्तक्षेप के कारण, मामला चार वर्षों तक विलंबित हो गया जिससे अधिनियम के उद्देश्य और प्रयोजन ही विफल हो गए। [कंडिका 9 और 10] [982-जी-एच; 983-ए-सी]

दीवानी अपीलीय क्षेत्राधिकार : 2013 की विशेष अनुमति याचिका (दीवानी) सं. 1258-1260।

मद्रास उच्च न्यायालय के 2009 के डब्लु.ए. सं. 559 से 561 में दिनांक 04.09.2012 के निर्णय एवं आदेश से।

एस. थनंजयन याचिकाकर्ता की ओर से।

न्यायालय का निर्णय दिया गया

के.एस. राधाकृष्णन, न्यायमूर्ति 1. केनरा बैंक, तिरुप्पुर (यहां प्रथम उत्तरदाता) ने ऋण वसूली अधिकरण, कोयंबटूर के समक्ष 2002 की ओ.ए. सं. 152 दाखिल किया, जिसमें उसमें प्रतिवादियों को 17% प्रति वर्ष ब्याज सहित रु. 29,68,161.93 की राशि, जो खुले नकद ऋण सुविधाओं के खाते पर राशि है; रु. 30,82,758 की राशि जो पैकिंग ऋण सुविधाओं के खाते पर देय राशि है और रु. 99,00,558 की राशि जो विदेशी विनिमय बिल सुविधाओं के लिए देय राशि है तथा एक आगे के निर्देश के लिए डिक्री का निर्देश करने वाला मूल आवेदन दाखिल किया।

2. याचिकाकर्ता और यहां उत्तरदाता सं. 2 से 6 ने अधिकरण के समक्ष 2007 के अंतरवर्ती आवेदन सं. 873 से 875 दाखिल किए जिसमें खातों का उद्धरण तथा बैंकिंग लेनदेन से संबंधित दस्तावेज प्रस्तुत करने का निर्देश मांगा गया। उन आवेदनों का बैंक ने यह तर्क देते हुए विरोध किया कि मांगे गए दस्तावेजों में से कोई भी आवेदनों में निर्णीत किए जाने वाले मुद्दे से सुसंगत नहीं था, बल्कि केवल कार्यवाही को लंबा खींचने के लिए था। अधिकरण ने आवेदनों को इस आधार पर अस्वीकार कर दिया कि याचिकाकर्ता का आशय केवल कार्यवाही में विलंब करना था, जिसके विरुद्ध याचिकाकर्ता ने मद्रास उच्च न्यायालय के समक्ष 2008 के रिट याचिका

सं. 14428-14430 दाखिल की। उच्च न्यायालय के विद्वान एकल न्यायाधीश(ए.न्या.) के समक्ष यह तर्क दिया गया कि भुगतान किए गए दस्तावेज और खाते अतिरिक्त लिखित कथन दाखिल करने के प्रयोजन के लिए नितांत आवश्यक हैं और बैंक उन दस्तावेजों को रोक नहीं सकता। प्रार्थना का बैंक ने यह कहते हुए विरोध किया कि मांगे गए दस्तावेजों में से कोई भी निर्णीत किए जाने वाले मुद्दे से सुसंगत नहीं था और यह प्रयास केवल कार्यवाही को लंबा खींचने का था। आगे, यह भी तर्क दिया गया कि मामले के मद्देनजर, याचिकाकर्ता के पास अधिनियम के अंतर्गत वैकल्पिक उपचार उपलब्ध था।

3. विद्वान एकल न्यायाधीश ने एक विस्तृत आदेश पारित किया और रिट याचिका स्वीकार की तथा अभिनिर्धारित किया कि उसमें याचिकाकर्ता ने 2007 के अंतरवर्ती आवेदन सं. 873 से 875 में मांगे गए दस्तावेजों के उत्पादन के लिए, सिवाय उन वचन-पत्रों के जिनके बारे में बताया गया था कि वे अप्राप्य हैं, मामला बनाया है। केनरा बैंक ने 2009 के रिट अपील सं. 559 से 561 दाखिल करके खंड पीठ (खं.पी.) के समक्ष अपील में मामला उठाया। रिट अपीलें स्वीकार करते हुए अभिनिर्धारित किया गया कि याचिकाकर्ता ने बैंकों और वित्तीय संस्थाओं के देय ऋणों की वसूली अधिनियम, 1993 (संक्षेप में 'अधिनियम') की धारा 20 के अंतर्गत उपलब्ध वैकल्पिक उपचार का लाभ नहीं उठाया था। उससे व्यथित होकर यह अपील दायर की गई है।

4. हमने याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता को सुना है। यह एक ऐसा आदर्श मामला है जो दर्शाता है कि पक्षकार वित्तीय मामलों में कार्यवाही को किस प्रकार लंबा खींच सकते हैं। पक्षकारों के साथ-साथ तंत्र ने भी विलंब में योगदान दिया है। कार्यवाही के प्रत्येक चरण पर विलंब हुआ। तथ्यों से पता चला कि केनरा बैंक ने वर्ष 2002 में ओ.ए. सं. 152/2000 के माध्यम से 17% ब्याज सहित कुल रु. 1,59,51,477.93 के लिए आवेदन दाखिल किया था और

ओ.ए उसी चरण पर है जहां वह दाखिल की गई थी, एक इंच भी आगे नहीं।

5. 2007 के अंतरवर्ती आवेदन सं. 873 से 875 याचिकाकर्ता के साथ-साथ उत्तरदाता सं. 2 से 6 द्वारा मूल आवेदनों के दाखिल होने के पांच वर्ष की अवधि के पश्चात अधिकरण के समक्ष दाखिल किए गए। आवेदनों को अधिकरण ने 18.02.2008 को खारिज कर दिया। वर्ष 2008 में दाखिल रिट याचिकाओं को विद्वान एकल न्यायाधीश ने 07.11.2008 को स्वीकार किया। वर्ष 2009 में केनरा बैंक द्वारा खंड पीठ (खं.पी.) के समक्ष रिट अपीलें दाखिल की गईं, जिनका निपटारा केवल 3 वर्ष की अवधि के पश्चात हो सका। बैंक की अपीलें स्वीकार कर ली गईं, क्योंकि प्रतिस्पर्धी उत्तरदाताओं ने अधिनियम के अंतर्गत उपलब्ध वैकल्पिक उपचार का लाभ नहीं उठाया था।

6. देश में ऋण वसूली अधिकरण बैंकों और वित्तीय संस्थाओं के देय ऋणों के शीघ्र निर्णय और वसूली के लिए स्थापित हैं। यह ध्यान में आया कि बैंकों और वित्तीय संस्थाओं को ऋणों की वसूली और उनके साथ प्रभारित प्रतिभूतियों के प्रवर्तन में काफी कठिनाइयों का सामना करना पड़ रहा था और इसलिए एक उपयुक्त तंत्र तैयार करने की वास्तविक आवश्यकता महसूस की गई जिसके माध्यम से बैंकों और वित्तीय संस्थाओं की बकाया राशि बिना विलंब के वसूल की जा सके। यह ध्यान में आया कि 30.09.1990 को सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों द्वारा दाखिल पंद्रह लाख से अधिक मामले और वित्तीय संस्थाओं द्वारा दाखिल लगभग 304 मामले विभिन्न न्यायालयों में लंबित थे, ऋणों की वसूली में सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों की रु. 5622 करोड़ से अधिक और वित्तीय संस्थाओं की लगभग 391 करोड़ की बकाया राशि संलिप्त थी। इतनी बड़ी राशि का मुकदमेबाजी में फंसे रहना, यह ध्यान में आया, देश के विकास के लिए निधियों के उचित उपयोग और पुनर्चक्रण को रोकता है। उपरोक्त परिदृश्य में, संसद ने बैंकों और वित्तीय संस्थाओं के देय ऋणों की वसूली अधिनियम, 1993 (1993 का अधिनियम 51) अधिनियमित

किया। अधिनियम स्वयं व्यथित पक्षकार को, यदि वह अधिकरण द्वारा पारित किसी आदेश से असंतुष्ट है, तो उपाय का तंत्र प्रदान करता है। अधिनियम की धारा 20 कहती है कि अधिनियम के अंतर्गत किसी अधिकरण द्वारा किए गए या किए गए माने जाने वाले किसी आदेश से व्यथित कोई भी व्यक्ति मामले में क्षेत्राधिकार रखने वाले अपीलीय अधिकरण में अपील दायर कर सकता है।

7. अधिनियम की धारा 18 क्षेत्राधिकार के प्रतिबंध से संबंधित है जो कहती है:

> "नियत दिन से और उसके पश्चात, कोई भी न्यायालय या अन्य प्राधिकरण धारा 17 में विनिर्दिष्ट मामलों के संबंध में कोई क्षेत्राधिकार, शक्तियां या प्राधिकरण नहीं रखेगा या प्रयोग करने का हकदार नहीं होगा (उच्चतम न्यायालय और संविधान के अनुच्छेद 226 और 227 के अंतर्गत क्षेत्राधिकार का प्रयोग करने वाले उच्च न्यायालय को छोड़कर)।"

8. वे शक्तियां जो असैनिक न्यायालय को प्रदत्त थीं, अब अधिनियम की धारा 17 के अंतर्गत एक अधिकरण को प्रदत्त हैं, जिससे वह बैंकों और वित्तीय संस्थाओं से ऐसे बैंकों और वित्तीय संस्थाओं के देय ऋणों की वसूली के लिए आवेदनों से निपट सकता है। हम इस मत के हैं कि जब अधिनियम की धारा 20 के अंतर्गत व्यथित पक्षकार को विशिष्ट उपचार उपलब्ध कराया गया हो, तो उच्च न्यायालय के विद्वान एकल न्यायाधीश को, भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के अंतर्गत अपने क्षेत्राधिकार के प्रयोग में, ऋण वसूली अधिकरण द्वारा पारित आदेशों में हस्तक्षेप करने में औचित्य नहीं था।

9. अनुच्छेद 226 के अंतर्गत उच्च न्यायालय की शक्तियों का अधिनियम के अंतर्गत बकाया की वसूली के मामले में तब तक आह्वान नहीं किया जा सकता जब तक कि कोई

सांविधिक उल्लंघन न हो जिससे पक्षकार को पूर्वाग्रह हो या जहां ऐसी कार्यवाही या कार्रवाई पूर्णतः मनमानी, अनुचित और अन्यायपूर्ण हो। जब अधिनियम स्वयं, अधिनियम की धारा 20 के अंतर्गत अपील द्वारा, एक तंत्र प्रदान करता है, तो हमारे मत में, उच्च न्यायालय को भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के अंतर्गत क्षेत्राधिकार का आह्वान करने में औचित्य नहीं है ताकि यह जांचा जा सके कि अधिकरण द्वारा आवेदनों की अस्वीकृति सही थी या नहीं। याचिकाकर्ता और प्रतिस्पर्धी उत्तरदाताओं का कोई मामला नहीं है कि बैंक या अधिकरण ने उनके आवेदनों को अस्वीकार करके किसी सांविधिक प्रावधान का उल्लंघन किया।

10. आवेदनों की अस्वीकृति के विरुद्ध रिट याचिका दायर की गई और उन्हें विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा स्वीकार किया गया और गुण-दोष पर निर्णय किया गया जो हमारे मत में संविधान के अनुच्छेद 226 के अंतर्गत अपने क्षेत्राधिकार के प्रयोग में अनुज्ञेय नहीं है। यदि अधिकरण द्वारा पारित प्रत्येक अंतवर्ती आदेश की शुद्धता या अन्यथा का रिट न्यायालय में परीक्षण होने जा रहा है, तो यह केवल ऐसे अधिकरण की स्थापना के उद्देश्य और प्रयोजन को ही विफल करेगा। हम पहले ही ध्यान में ला चुके हैं कि रिट न्यायालय के हस्तक्षेप के कारण, मामला चार वर्षों तक विलंबित हो गया जिससे अधिनियम के उद्देश्य और प्रयोजन ही विफल हो गए। इसलिए, हम इन याचिकाओं में कोई गुण-दोष नहीं पाते और इन्हें खारिज किया जाता है।

याचिकाएं खारिज।

के.के.टी.

खंडन (डिस्क्लेमर)- स्थानीय भाषा में निर्णय के अनुवाद का आशय, पक्षकारों को इसे अपनी भाषा में समझने के उपयोग तक ही सीमित है और अन्य प्रयोजनार्थ इसका उपयोग नही किया जा सकता। समस्त व्यवहारिक, कार्यालयी, न्यायिक एवं सरकारी प्रयोजनार्थ, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रमाणिक होगा साथ ही निष्पादन तथा कार्यान्वयन के प्रयोजनार्थ अनुमान्य होगा।